प्रथम अध्याय

पृष्ठ 8-32

"भगवतीचरण वर्माजी का

व्यक्तित्व एवं कृतित्व"

* * *

बहुमुखी प्रतिभा के धनी भगवतीचरण वर्मा, प्रेमचन्दो-तर हिन्दी साहित्य की अगली कड़ी हैं। उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचन्द के बाद जिन रचनाकारों ने अपने साहित्य से हिन्दी भाषा और हिन्दी साहित्य को अपने योगदान से विकसित एवं समृध्द किया, ऐसे रचनाकारों में भगवतीचरण वर्माजी का नाम बड़ी श्रध्दा के साथ लिया जाता हैं। कवि, कहानीकार, उपन्यासकार, नाटककार, निबंधकार आदि विभिन्न रुपों में उन्होंने अपनी बहुमुखी प्रतिभा का परिचय दिया है। क्या कविता, क्या कहानी, क्या उपन्यास, क्या नाटक आपने हर विधा में नये प्रतिमान कायम किये हैं। "भैंसागाड़ी" जैसी कविता, "प्रायश्चित" जैसी कथा उपन्यास के क्षेत्र में "चित्रलेखा" आदि रचनाएं नये आयामों को लेकर प्रस्तुत हुई हैं। उनका "अतीत के गर्त से" उनके संस्मरणीय साथियों के अमिट स्मृतियों का संकलन है। "बुझता दीपक", 'रुपया तुम्हें खा गया' आदि उनके नाटक और 'दो कलाकार', 'सबसे बड़ा आदमी', 'चौपाल' आदि एकांकी अभिनेयता की कसौटीपर खरे उतरते हैं। उन्होंने साहित्यिक और सामाजिक निबंध लिखकर अपने निबंध लेखन - प्रतिभा का भी परिचय दिया है। इस प्रकार भगवतीचरण वर्मा एक सम्पूर्ण एवं सफल साहित्यकार के रुप में हिन्दी आँचल में ख्याति प्राप्त कर चुके हैं। किंतु हिन्दी साहित्य में उनकी मूल प्रवृ-त एक कथा शिल्पी की ही रही। भगवती बाबू ने अन्य विधाओं की अपेक्षा उपन्यास अधिक मात्रा में लिखे और उसी में अधिक मात्रा में सफल भी हुए। इसलिए उन्हें उपन्यासकार के रुप में ही अधिक जाना जाता है। अतः कथात्मक साहित्य में उनका योगदान अक्सर स्वर्णाक्षरों में लिखा जाने योग्य है। उनके 'भूले बिसचे चित्र' उपन्यास को भारत सरकार द्वारा 'साहित्य अकादमी' से सम्मानित किया गया।

ऐसे इस प्रसिध्द एवं ख्याति प्राप्त, महान् उपन्यास का अनुशीलन करने के लिए भगवतीचरण वर्माजी के जीवन - व्यक्तित्व एवं कृतित्व को समग्र रुप में जान लेना अनिवार्य हो जाता है। प्रस्तुत अध्याय में भगवती बाबू के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश ड़ाला गया है।

जन्म - माता - पिता :

भगवती बाबू का जन्म एक सम्पन्न कायस्थ परिवार में हुआ। उनके पिता का नाम श्री देवीचरण श्रीवास्तव था। पितामह दो - तीन गांवों के जमींदार थे। उनकी दो पत्नियां थीं। जब उनकी सन्तानों के बीच उनकी जायदाद का बंटवारा हुआ तो उनके हाथ वैभव की चमक मात्र रह गई।

भगवती बाबू के पिता वकालत पास करने के बाद आजीविका की खोज में उन्नाव जिले की शफीपुर तहसील में जाकर बस गए। वहां 30 अगस्त, 1903, भाद्र शुक्ल अष्टमी रविवार के दिन अपरान्ह तीन-चार बजे के बीच, जेष्ठ नक्षत्र में वर्माजी का जन्म हुआ।

शफीपुर जैसे छोटे कसबे में अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा दिलाना असम्भव था और देवीचरण अपने बच्चों को खूब पढ़ाना तथा अच्छी शिक्षा दिलाना चाहते थे। कुछ ही दिनों में देवीचरण परिवार के साथ कानपुर चले गये। कानपुर जाकर वे पटकापुर मोहल्ले में रहने लगे और वहां कान्यकुब्ज ब्राह्मणों के बीच भगवती बाबू का बचपन बीतने लगा। मोहल्ले के अखाडों में उनकी हुडदंग-पसंद प्रवृत्ति को सन्तुष्टी होती रही। वे खेल-कूद में प्रवीण थे और उनका गला भी मीठा था। आस-पास के लोग उनको गाते सुनकर एकत्र हो जाते थे। किन्तु सुख के ये दिन अधिक दिन नहीं रह सके। नियति को कुछ और ही मंजूर था। केवल पांच वर्ष की कच्ची आयु में ही भगवती बाबू के परिवार पर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा। सन् 1908 में कानपुर में प्लेग का भयंकर प्रकोप था। उस महामारी में भगवती बाबू के पिता का देहान्त हो गया। परिवार में भगवती बाबू के सिवा एक तीन वर्षीय .. भाई, दूध पीती बहन और विधवा मां शेष बचे। पिता के देहान्त के पश्चात् भगवती बाबू अपने परिवार के साथ उनके ताऊ के यहां रहने लगे। उनके ताऊ ने भगवती बाबू के पिता की जमीने बेंचकर उनसे मिलनेवाले रुपयों को बैंक में जमा कर दिया। इन रुपयों के बदले जो ब्याज मिलता था वही उनके परिवार के भरन-पोषण का एकमात्र साधन था। यह रकम बहुत कम याने केवल 22 रुपए प्रतिमाह थी और इसी से परिवार को अपना कार्य चलाना पड़ता था। "इस तरह परिस्थिति के कुचक्र ने भौंरा-गिल्ली खेलने की ही उम्र में शिशु भगवतीचरण के कोमल हाथों में अनाज-गल्ला, मिर्च-मसाला का थैला पकड़ा दिया।"[1] इस प्रकार भगवती बाबू का संघर्षमय जीवन शिशु - अवस्था से ही प्रारंम्भ हुआ।

शिक्षा :

भगवती बाबू को अपनी शिक्षा के लिए बहुत संघर्ष करना पड़ा, बहुत सी कठिनायियों का सामना करना पड़ा पिता का साया तो बचपन में ही छूट चुका था। अब उनपर किसी का शासन या दबाव नहीं था। वे आजाद पंछी की तरह बन गये थे। किन्तु उन्होंने अपने-आप को किसी गलत रास्ते पर बहकने नहीं दिया। इसका कारण अपनी जाति और कुल के संस्कार तथा नैतिक मान्यताएँ आदि बातों को माना जा सकता है।

बचपन से ही वर्माजी की बुध्दि तीव्र और प्रतिभासम्पन्न थी। प्रारम्भ में वे बड़े तेज रहे। यहां तक की चौथे दर्जे में उन्हें दुगुना प्रमोशन मिला। वर्माजी ने खुद इसे स्वीकारते हुए कहा है - "अपने बचपन में मैं कुशाग्र बुध्दि का बालक समझा जाता था, कक्षा में प्रथम या दुसरा स्थान मिलता था मुझे।"[2] घर की जिमेदारी एवं कामकाज के कारण वे एकाग्र होकर पढ़ नहीं पाते थे। स्कूल की कापी - किताबें खरीदने के लिए अनेक बार उन्हें आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ता था और कभी कभी तो बिलकुल असमर्थ रहते थे।

भगवती बाबू को मुहल्ले में होने वाले आर्थिक अथवा सांस्कृतिक उत्सवों में भी जाना पड़ता था क्यों कि वे एक सभ्रांत परिवार के बालक और आदरणीय व्यक्ति के भतीजे जो थे। एक दिन शिक्षक की क्रूर नीति और पाठ याद न करने के कारण उनकी कसकर पिटाई हुई और उन्हें एक दर्जे नीचे उतार दिया गया। इस अपमान से उनके किशोर हृदय का अहं कुछ सम्भला और वे पांचवीं तथा छठी कक्षा में क्रमशः प्रथम और द्वितीय आए। सातवीं कक्षा में वे उ-तीर्ण तो हुए किन्तु हिन्दी में अनुत्तीर्ण हुए। इसके उपरन्त प्रथम या द्वितीय स्थान प्राप्त करने की बात तो दूर रही, उ-तीर्ण होना भी उनके लिए कठिन हो गया। उनकी गरीबी ने जहां उन्हें पाठयक्रम की पुस्तकों से वंचित रखा वहीं अतिशय व्यस्तता ने उन्हें व्यक्तिगत अध्ययन करने का भी अवसर नहीं दिया। इतना होने पर भी भगवती बाबू नियमित रुप से स्कूल जाया करते थे। उनके पास अक्सर पुस्तकों की कमी रहती थी, और कभी-कभी होते भी नहीं थे। उनके सहपाठी उनका उपहास किया करते थे, कक्षा अध्यापक उन्हें डांटते-फटकारते थे किन्तु वे इसे अपनी भाग्य का विधान समझकर चुप रह जाते। इन कठिन परिस्थितियों में भी भगवती बाबू ने कभी अपनी हिम्मत नहीं हारी, कभी निराश नहीं हुए। उनके पैरों को जूते तक नसीब नहीं होते थे। "उनका स्वाभिमान इतना प्रबल था कि वे अपने को किसी की दया का पात्र नहीं बनने देना चाहते थे। अकारण मिलनेवाली किसी भी आर्थिक सहायता को वे ठुकरा देते थे।"[3] कविता का चस्का और 'गोष्ठी' का चक्कर वे छोड़ नहीं सकते थे इसी कारण हायस्कूल की परीक्षा में भगवती बाबू अनुत्तीर्ण हो गये किन्तु इससे निराश न होते हुए उन्होंने फिर से अध्ययन प्रारम्भ किया और 1921 में किसी प्रकार ले देकर तीसरी श्रेणी में वे उ-तीर्ण हो गए। लोगों ने उन्हें अब पढ़ाई छोड कुछ काम-दाम करने की सलाह दी किन्तु वे आगे पढ़ना चाहते थे। नाजुक आर्थिक परिस्थिति के बावजूद भी मां की ममता ने उन्हें आगे पढ़ने की अनुमति दे दी।

सन् 1921 में कानपुर के "क्राइस्ट चर्च कालेज" में प्रवेश लिया। पढ़ाई के साथ-साथ वे 'प्रभा', 'शारदा' एवं 'प्रताप' नामक पत्रिकाओं में कहानियां और कविताएं लिखने लगे। सन् 1922 में कालेज के प्रथम वर्ष की परीक्षा उ-तीर्ण हुए। सन् 1923 में वे इंटर मिडिएट के द्वितीय वर्ष में पढ़ रहे थे - अनुत्तीर्ण हो गए। इस बार अनुत्तीर्ण होने का कारण था कानपुर में होनेवाला हिन्दी सम्मेलन का अधिवेशन। सन् 1924 में इंटर उ-तीर्ण होकर वे इलाहाबाद चले आए। अब पढ़ाई में उनका जी लगता नहीं था। फिर भी पढ़ रहे थे क्यों कि लोग नौकरी करने के लिए न कहें। विश्वविद्यालय में पहले तीन घंटों में जो विषय पढ़ाये जाते थे उसीमें उन्होंने अपना नाम लिखा लिया। सन् 1926 में उन्होंने 'बी.ए.' द्वितीय श्रेणी में उ-तीर्ण किया। 'एम.ए.' के लिए उन्होंने हिन्दी विषय को चुना। सन् 1927 में 'एम.ए.' के प्रथम वर्ष की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उ-तीर्ण की।

उन्हें डर था कि कहीं ऐसा न हो कि 'एम.ए.' द्वितीय वर्ष में भी प्रथम श्रेणी मिल जाएं। भगवती बाबू नौकरी नहीं करना चाहते थे। 'एम.ए.' द्वितीय वर्ष परीक्षा में भी प्रथम श्रेणी मिल जाती तो भगवती बाबू को शायद प्रोफेसरी करनी पड़ती जो वे करना नहीं चाहते थे। अतः वर्माजी ने 'एम.ए.' न करके वकालत पास करने का निश्चय किया। सन् 1928 ई. में वे 'एल-एल.बी.' की परीक्षा उ-तीर्ण हो गए। इस प्रकार भगवती बाबू ने अपनी अध्ययन यात्रा का कठिन मार्ग कामयाबी के साथ पार किया।

विवाह :

भगवती बाबू के दो विवाह हुए। सन् 1923 में उनका पहला विवाह हुआ। उस साल वे इंटर में पढ़ रहे थे। उनकी प्रथम पत्नी का नाम उमा था। किन्तु विवाह के दस साल बाद ही उनकी पत्नी उन्हें छोड़कर हमेशा के लिए इस दुनियां से चल बसी। सन् 1934 में भगवती बाबू ने दूसरा विवाह किया। उनकी दूसरी पत्नी का नाम था - नंदिता।

भगवती बाबू की संघर्षमय जीविका :

सन् 1928 ई. में वकालत पास करने के पश्चात् वर्माजी ने कानपुर में अपने पिताजी के जुनियर वकील बाबू मुन्नूलाल के निर्देशन में वकालत की प्रेक्टिस प्रारम्भ की, लेकिन जिन बातों पर वकालत चलती है उनपर वर्माजी का विश्वास नहीं था। मुकद्दमें की तारीख भूलकर वे साहित्य साधना में लगे रहते थे। एक ही जगह पर जमकर रहना जैसे उनके स्वभाव में ही नहीं था। अतः 1930 में वे कानपुर छोड़कर अपने नानेहाल हमीरपुर वकालत जमाने के उद्देश्य से चले आये। वहीं पर उन्होंने चित्रलेखा' उपन्यास लिखना आरम्भ किया। सन् 1931 में भदरी रियासत के राजा के निमंत्रण पर वे वकालत करने प्रतापगढ़ आ गए। राजा साहब ने वायदा किया था कि अपने मुकद्दमें वे उन्हींको देंगे। वस्तुतः राजा साहब भदरी उनके प्रति श्रध्दालु थे तथा किसी भी बहाने उन्हें सहायता करना चाहते थे। भगवती बाबू की प्रकाशन संस्था की योजना को भी राजा साहब ने स्वीकार कर लिया किन्तु रियासती कारिन्दों की कृपा से यह योजना ठप्प हो गई। स्वाभिमानी हृदय के भगवती बाबू को यह स्वीकार न हुआ कि वे बिना काम किए हुए राजा साहब के आश्रय में रहे। इसलिए वह वापस इलाहाबाद चले आये। "सर्वहारा वर्ग की तरह बसना और उखड़ना तो अब उनके जीवन का क्रम बन गया था।"[4] वर्माजी के ही शब्दों में कहें तो - "उखड़ना और जमना और उखड़ना; जैसे सुस्ताने का कभी मौका ही नहीं मिला। इलाहाबाद से वकालत पास की, वहाँ से कानपुर, वहाँ

से हमीरपुर, वहाँ से परतापगढ़ और वहाँ से फिर थोड़े-से दिनों के लिए इलाहाबाद। इलाहाबाद लौटा सन् 1933 में वहाँ जमने के लिए, बिना यह जाने कि तीन-चार वर्ष में मुझे फिर उखड़ना होगा।"[5]

सन् 1931 का अन्तिम चरण ही था कि सारे देश में साम्प्रदायिक दंगों की लपटें उठने लगीं, हिन्दू-मुस्लिम एक दूसरे के खून के प्यासे हो गये। इसी कांड में श्री गणेशशंकर विद्यार्थी के भी प्राण चले गये। विद्यार्थीजी की मृत्यु से भगवती बाबू पर भयानक मानसिक आघात हुआ। भगवती बाबू को साहित्यकार बनाने के पिछे गणेशशंकर विद्यार्थी का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उन्होंने लिखा है - "गणेशशंकर विद्यार्थी - इस नाम के साथ मेरी स्मृतियाँ अचानक ही जाग उठती हैं। आज जो कुछ मैं हूँ, मेरी जीवन-धारा ने मेरे बाल्य काल में मोड़ लिया। मैं सोच रहा हूँ कि क्या उसका समस्त न भी सही, तो थोड़ा-बहुत लेकिन महत्व पूर्ण श्रेय गणेशशंकर विद्यार्थी को नहीं है?"[6] इस निराशा और अवसाद की भयावह पीड़ा से मुक्ति पाने के लिए उन्होंने 'विनोद मिल्स' उज्जैन के मालिक श्री लालचन्द सेठी के यहाँ ढाई सौ रुपये प्रति माह पर नौकरी कर ली। किन्तु वर्माजी इस नौकरी से भी थोड़े ही दिनों में ऊब गये, क्यों कि पत्र पढ़कर सुनाना या पत्र लिखना और सेठीजी के साथ नाश्ता-भोजन करने के अतिरिक्त उन्हें और कुछ काम ही नहीं था। भदरी वाली स्थिति की ही यहाँ पुनरावृत्ति हुई, जिससे वह त्यागपत्र देकर इलाहाबाद चले गये।

भदरी रियासत का आश्रय छोड़ने के बाद उन्हें और अधिक आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा था। ऐसे ही समय (सन् 1933 में) उनका प्रथम -काव्य-संग्रह 'मधुकण' प्रकाशित हुआ। सन् 1933 का अन्तिम चरण ही था कि उनकी पत्नी ने संघर्षों से हारकर अपना दम तोड दिया। वर्माजी ने सन् 34 में दूसरा विवाह किया। सन् 1935 में उन्हें हिन्दी साहित्य सम्मेलन के मन्त्री निर्वाचित किया गया। सन् 1936 में उनका 'तीन वर्ष' उपन्यास प्रकाशित हुआ। उसके बाद 'इंस्टालमेंट', 'दो बांके' कहानी-संग्रह और 'प्रेम संगीत' काव्य-संग्रह प्रकाशित हुए। धीरे-धीरे हिन्दी साहित्य जगत में उनकी प्रसिध्दी बढ़ रही थी। इन्हीं दिनों कलक-ता की एक फिल्म कम्पनी ने कहानी और संवाद-लेखन के लिए उन्हें बुलाया परन्तु अपने स्वाभिमानी स्वभाव के कारण उन्हें एक वर्ष के बाद ही त्यागपत्र देना पड़ा। सन् 1939 ई.में वर्माजी कांग्रेस के त्रिपुरी अधिवेशन में सम्मिलित होने के लिए चले गये। किन्तु वहाँ से वह कलक-ता वापस आ गए और 'विचार' नामक साप्ताहिक पत्र निकालना आरम्भ किया। भगवती बाबू यहाँ भी अधिक दिनों तक नहीं रह सके।

सन् 1940 में उन्हें 'हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के काशी अधिवेशन में तरुण साहित्य सम्मेलन का अध्यक्ष निर्वाचित किया गया। उसी वर्ष फिल्म-निर्देशक श्री केदार शर्मा ने चित्रलेखा' उपन्यास

पर फिल्म बनाना प्रारम्भ किया। उनका कविता-संग्रह 'मानव' भी उसी वर्ष प्रकाशित हुआ।

सन् 1942 में वर्माजी को बम्बई टाकीज में सीनेरिया-लेखक की हैसियत से बुलाया गया। सन 1942 से 47 ई. तक भगवती बाबू बम्बई फिल्मी जीवन से सम्बध्द रहे और इसी बीच उनका उपन्यास 'टेढे मेढ़े रास्ते' पूरा हो गया। बम्बई में ही 'भूले बिसरे चित्र' का पहला अध्याय पूरा किया। सन 48 में भगवती बाबू लखनऊ से प्रकाशित होने वाले दैनिक पत्र 'नवजीवन' के प्रधान सम्पादक बन गये। किन्तु सन् 1949 में पत्र की आन्तरिक राजनीति से ऊबकर त्यागपत्र दे दिया। इन्हीं दिनों बम्बई के फिल्मी जीवन के अनुभवों पर आधारित अपना 'आखरी दाँव' उपन्यास पूरा किया। इसके उपरान्त देश की समाजवादी जनतंत्रनीति से प्रभावित होकर वर्माजी जमींदारी - उन्मूलन के प्रचार कार्य में लग गये। सन् 1950 ई. मे. भगवती बाबू आल इंडेया रेडियो के हिन्दी सलाहकार नियुक्त हुए। इस पद के कार्यकाल में उन्हें दो वर्ष दिल्ली रहना पड़ा। इस अन्तराल में उन्होंने त्रिपथगा' (काव्य-रुपक), 'बुझता दीपक', 'रुपया तुम्हें खा गया' और 'वासवद-ता' (पट-कथा) का सृजन किया। सन् 1956 में वे दिल्ली से लखनऊ वापस आ गये और अगस्त, सन् 1957 में रेडियो की नौकरी छोड़ दी। नौकरी छोड़ने के सम्बन्ध में भगवती बाबू ने खुद कहा है - "इस साहस का एक कारण और था, मेरे पिछले उपन्यासों का उस समय तक काफी प्रचार हो चुका था और मुझे इतनी रायल्टी मिलने लगी थी कि मैं भूखों न मरने पांऊ।"[7] यही विचार उन्होंने अपने संस्मरण - 'अतीत के गर्त से' में अभिव्यक्त किए हैं - "सन् 1957 में मेरे उपन्यासों की रायल्टी इतनी अधिक हो गयी थी कि मैं आजीविका के लिए मात्र अपने उपन्यासों पर अवलम्बित हो गया और मैंने रेडियो की एक मोटी तनख्वाह की नौकरी छोड़ दी।"[8] भगवती बाबू स्वभावतः स्वाभिमानी व्यक्ति थे। उन्होंने 'बहुत छोटे समय को छोड़कर, नौकरी या वकालत नहीं की। 1933 के इर्द-गिर्द प्रतापगढ़ जिले के तअल्लुकेदार राजा साहब, भदरी के साथ रहने के बावजूद वे राजाश्रयी नहीं हुए।"[9]

एक मुद्दत के बाद भगवती बाबू के जीवन में आर्थिक स्थिरता प्राप्त हुई। रेडियो की नौकरी छोड़ने के बाद वर्माजी लखनऊ में स्थायी रुप से बसने लगे। उनका बृहत् उपन्यास 'भूले बिसरे चित्र' जिसका लेखन सन् 1937 में प्रारंम्भ हुआ था वह सन् 1969 में पूरा होकर प्रकाशित हुआ।

सन 1960 में लखनऊ में 'चित्रलेखा' भवन का निर्माण करके वहीं पर वर्माजी स्थायी रुप में रहने लगे। उन्हें यह स्थिरता संघर्षमय-जीवन के 53 साल बाद नसीब हुयी। वर्माजी का जीवन एक संघर्ष की कहानी है। आर्थिक, सामाजिक और पारिवारिक समस्याओं से जूझते तथा नौकरियों में व्यस्त

रहते हुए भी यह हिन्दी का अमर साहित्यकार अपनी आत्माभिव्यक्ति को अन्तिम समय तक लिपिबध्द करता रहा। उनकी नौवारेयों का अधिकतर क्षेत्र साहित्य से सम्बन्धित रहा। स्वयं पत्र-पत्रिकाएँ निकालकर उनके सम्पादन का कार्य किया। आयु की 13 सालसे लेकर मरते दम तक अपनी ओर से जितनी अधिक हो सके उतनी साहित्य की सेवा की। अपने-आप को साहित्य क्षेत्र के लिए समर्पित किया। भगवती बाबू ने अनेक सृजनात्मक कृतियों को जन्म दिया और हिन्दी साहित्य जगत् में अपना अमर स्थान बना दिया।

उम्र के 78 वर्ष की आयु में गले के कर्करोग के कारण दिल्ली के आयुर्विज्ञान अस्पताल में अक्तूबर, सन् 1981 को इस महान कलाकार का देहान्त हो गया।

व्यक्तित्व :

(अ) वर्माजी का अंतर्मुखी व्यक्तित्व : बहुमुखी प्रतिभा के धनी, सहज कवि एवं उपन्यासकार भगवतीचरण वर्मा का अंतर्मुखी व्यक्तित्व अपने देदिप्यमान प्रकाश से संपूर्ण हिन्दी साहित्य जगत को आलोकित करता है। "मध्यम कद का स्वस्थ, सुडौल, गठा हुआ, साँवला चुस्त बदन, मुख पर मधुर मुस्कान और मन में असीम आत्मविश्वास, आँखों में एक प्रकार का विषाक्त सम्मोहन तथा दिल में धधकता हुआ अंगारा, जिस पर इन्द्रधनु खेल रहा हो - यह हैं 'चित्रलेखा' के वर्माजी। अपनी मस्ती में विशाल हस्ती को छिपाए हुए उनका महान् व्यक्तित्व मस्ती के उस आलम में लेना तो क्या, पर अपने प्यारसे सिंचित भावनाओं से ओत प्रोत अमृत अवश्य बाँटना चाहता है।"[10] भगवतीचरण वर्माजी के उपन्यासों के विशेष अध्येता डा. बैजनाथ प्रसाद शुक्ल ने उपर्युक्त काव्यमय शब्दों में वर्माजी के अन्तर्बाह्य प्रकृति का, उनके जीवन दर्शन का सम्पूर्ण चित्रण किया है। वर्माजी के इस मस्ती की झाँकी उनके साहित्य में यत्र-तत्र देखने को मिलती है। 'हम दीवानों की क्या हस्ती' कविता में इसका उदाहरण द्रष्टव्य है -

"हम दिवानों की क्या हस्ती,
हैं आज यहाँ, कल वहाँ चले;
मस्ती का आलम साथ चला,
हम धूल उड़ाते जहाँ चले।" [11]

वर्माजी की वेश-भूषा सीधी सादी थी। वे साफ धुला खद्दर का कुर्ता-पाजामा पहनते थे, सिरपर तिरछी टोपी और हमेशा मुँह में पान दबाए रहते थे। जब कभी वर्माजी किसी समाज में पहुँच

जाते थे, तो उनके आस-पास हँसी और उल्लास की झड़ी- सी लग जाती थी। उनके सरल-निश्चल हृदय में आत्मीयता प्रचुर मात्रा में भरी पड़ी थी। "वह नौजवानों में नौजवान, प्रौढ़ों में प्रौढ़, भावना-प्रधान, मानवता के मूर्तिमान प्रतीक, महाप्राण - शक्ति - सम्पन्न लक्ष्य के समक्ष वक्ष तानकर कर्म से प्रेरित, नियति से प्रभावित, प्रफुल्लचि-त, अनुभव की अमूल्य सौगात लिए स्वाभिमानी व्यक्तित्व के स्वामी" [12] हिन्दी साहित्य जगत में अमर हैं और अमर रहेंगे।

श्री. राजनाथ शर्मा अपने पुस्तक 'हिन्दी के प्रमुख कहानीकार' में भगवती बाबू के रंग-रुप, वेश-भूषा का वर्णन इन शब्दों में करते हैं - "साढ़े चार फीट लम्बे, गठे बदन पर खादी की धोती, खादी का कुरता, सर पर खादी की टोपी, पैर में कानपुरी चप्पल और आँखों पर कटिदार चश्मा - यह है मुंशी भगवतीचरण वर्मा। भगवती बाबू की तेजी उनकी दोनों आँखों से टपकती है, जब कभी वे विस्फारित नेत्रों से देखते हैं। उनकी बड़ी - बड़ी गोल आँखें एक प्रकाश सा उगल उठती हैं - एक ज्वाला ------- माथा किसी भी गिरजाघर के बिन्दु की भाँति उन्नत है। लेकिन गाल पान की गिलौरी और सुर्खी की ज्यादती के कारण प्लेटो के ऊबड़ - खाबड मैदान की भाँति भद्दे और कुरुप दीखते हैं।" [13]

वर्माजी का जीवन सत्य पर आधारित था। अंधश्रध्दा, आध्यात्मवाद पर उनकी आस्था नहीं थी। जो व्यक्ति परिस्थितियों से संघर्ष नहीं कर सकता वही अपनी स्वाभाविक प्रवृ-तियों से बचता फिरता है। यह पलायनवाद उन्हें स्वीकार नहीं था। वे आदयन्त यथार्थवादी रहे। उन्मुक्त भावनाओं में उनका विश्वास था; किन्तु उनका भोगवाद विकृत नहीं था क्यों कि उच्छृंखल भावनाओं में उनका विश्वास नहीं था तो पूर्वापार मान्यताओं में परिस्थिति के साथ परिवर्तन होना वे स्वाभाविक मानते थे। व्यक्ति स्वातंत्र्य को वे अनिवार्य मानते थे। भगवती बाबू की व्यक्तिवादी चेतना सामाजिक और व्यापक थी।

वर्माजी नियतिवादी अवश्य थे किन्तु उनका नियतिवाद भ्रान्तिमूलक अंधविश्वास पर आधारित नहीं था। उसमें मानव जीवन के स्वस्थ विकास की रागस्त संभावनाएं निहित थीं। उनके नियतिवाद में दु:खवाद, अकर्मण्यता और निराशावाद के लिए कोई स्थान नहीं था। अपनी इन्हीं मान्यताओं के कारण विषम परिस्थितियों में रहकर भी वे अपनी जीवन रुपी नैया को सफलता के साथ पार लगा सके।

भगवती बाबू एक कुशाग्र बुध्दिवाले व्यक्ति थे। भावुक प्रकृति तथा कवि प्रतिभा उन्हें जन्मजात मिली थी। वे स्वाभिमानी और एक सीमा तक अनासक्त व्यक्ति थे। उन्होंने कभी भी अपने प्रशंसा एवं आलोचना की परवाह नहीं की। यह बात और है कि प्रशंसा उन्हें बुरी नहीं लगती

थी किन्तु वे उसके भूखे नहीं थे और निंदा से उन्हें चोट अवश्य लगती थी किन्तु निंदा का भय उनमें नहीं था। उनके अन्दर की जीवनी शक्ति और मस्ती ने उन्हें हर स्थिति का सामन करने की एक ऐसी शक्ति प्रदान की जिसके कारण वे हमेशा अजेय बने रहे। भगवती बाबू का स्वभाव विनोदप्रिय और हंसमुखा था। विरासत में मिले इन्हीं विशेषताओं के कारण ही जीवन की विषमतम् परिस्थितियों में भी उनका साहस बना रहा। अपने व्यक्तिगत सामर्थ्य और नियतिवादी सीमा का उनका व्यक्तित्व एक विशाल दीपस्तंभ है। भगवती बाबू के जीवन पर प्रकाश डालने से उनके व्यक्तित्व के विभिन्न पहलू हमें दृष्टिगोचर होते हैं।

(आ) बहिर्मुखी व्यक्तित्व :

वकील : वकील की हैसियत से भगवती बाबू सफल नहीं हो पाये और होना भी नहीं चाहते थे। उनका जीवन सत्य पर आधारित था। झूठ-फरेब से वे हमेशा दूर रहा करते थे। बचपन से ही उनका लगाव एवं रुचि साहित्य में ही रही इसीलिए वे वकालत छोड़कर साहित्य सेवा में ही आजीवन संलग्न रहे।

पत्रकार : वर्माजी के व्यक्तित्व का एक और पहलू पत्रकार के रुप में हमारे सामने आता है। उन्होंने स्वयं पत्र-पत्रिकाएँ निकालकर उनके सम्पादन का भी कार्य किया। उन दिनों (सन 1939) कलक-ता से 'विचार' नामक साप्ताहित पत्र निकल रहा था। भगवती बाबू के योगदान से यह पत्र बहुत चमका। सन 1947 में वे लखनऊ से प्रकाशित होने वाले 'दैनिक नवजीवन' पत्र के प्रधान सम्पादक बन गये। अतः वर्माजी ने एक सफल पत्रकार के रुप में भी अपना योगदान दिया है।

कवि : हिन्दी साहित्य में भगवती बाबू का पदार्पण सबसे पहले एक कवि के रुप में हुआ। भगवती बाबू के काव्य सृजन प्रक्रिया में उनके अध्यापक श्री जगमोहन 'विकसित' का महत्वपूर्ण योगदान रहा। 'विकसित' जी के कहने पर उन्होंने मैथिलीशरण गुप्त की 'भारत-भारती' का सस्वर पाठ प्रारम्भ किया। उन्हीं के शब्दों में, "भारत-भारती' पढ़ते पढ़ते मेरे हृदय में उमंगों का सागर लहराने लगा। मैंने कागज-पेंसिल उठायी, 'भारत-भारती' के छंद में देश-प्रेम पर मैंने अपनी सात-आठ पंक्तियाँ लिख डाली। दूसरे दिन मैंने 'विकसित' जी को, जो स्वयं कवि थे, अपनी वह कविता दिखलायी। उन्होंने मुझे मात्रा गिनने की प्रक्रिया बतलायी, छंदों का ज्ञान कराया। कविता का प्रथम पाठ और साथ ही अन्तिम पाठ। तो मैं कवि बन गया।"[14] यहीं से भगवती बाबू के साहित्य सृजन

प्रक्रिया का प्रारम्भ हो गया। उन दिनों कानपुर में 'प्रताप' नामक साप्ताहिक पत्र की धूम थी जिसके प्रकाशक गणेशशंकर विद्यार्थी थे। वर्माजी नियमित रुप से 'प्रताप' पढ़ा करते थे। उन्होंने उसी से प्रेरणा ग्रहण की और 13-14 वर्ष की बाल्यावस्था में ही अपनी पहली कविता 'प्रताप' में प्रकाशित कराई। इसके बाद लगातार एक के बाद एक कविताएं 'प्रताप' में छपने लगी। मानो उन्हें कविता का चस्का लग गया। आयु के पंद्रहवें वर्ष से ही भगवती बाबू उस समय की अत्यंत लोकप्रिय साहित्यिक गोष्ठी में भी जमने लगे। अब उनकी कविताएँ अनेक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होने लगी। उनकी कविताओं के रसिकों में लगातार वृध्दि होने लगी और वे कवि के रुप में प्रसिध्द होने लगे। उन्होंने स्वतंत्रता आन्दोलन के जोश में कुछ राजनीतिक कविताएँ भी लिखीं। छायावादी प्रवाह में भी खूब बहे। 'हम दीवानों की क्या हस्ती' उनकी इन्हीं दिनों की प्रसिध्द कविता है। बहुत से कवि सम्मेलनों में उनकी प्रसंशा की गयी। 'भैसागाडी' जैसी कविता आधुनिक कविताओं में अपना अलग स्थान है। 'महाकाल', 'कर्ण', 'द्रौपदी' जैसी कविताएँ पौराणिक आख्यानों के आधार पर लिखी गयी हैं। ये कविताएँ त्रिपथगा' काव्यसंग्रह में संकलित हैं। 'मधुकण', 'प्रेमसंगीत', 'मानव' आदि उनके उल्लेखनीय काव्यसंग्रह हैं। प्रेम, प्रणय, देववाद, प्रगतिवाद, मानवतावाद आदि उनकी कविताओं की विशेषताएँ हैं।

समग्रतः भगवती बाबू एक प्रतिभासम्पन्न एवं सफल कवि हैं। एक कवि के रुप में उन्होंने हिन्दी साहित्य में अपना अलग स्थान बना लिया है।

कहानीकार :

भगवती बाबू में कहानी गढ़ने की अद्‌भूत क्षमता थी। उन्होंने कहानियाँ भले ही कम लिखी हों लेकिन उनमें विविधता के दर्शन होते हैं। मानव मन के विभिन्न भाव जैसे-प्रेम, क्रोध, लोभ, हास्य आदि और स्वार्थ, अर्थलिप्सा, ढोंगी वृ-ित, दिखावे की भावना आदि विभिन्न पहलुओं को अपनी कहानियों में प्रस्फुटित किया है। हमें यह भूलना नहीं चाहिए कि वर्माजी सर्वप्रथम एक कवि के रुप में प्रख्यात हुए किन्तु गणेशशंकर विद्यार्थी की प्रेरणा से वे गद्य-साहित्य-क्षेत्र में आये। वर्माजी के ही शब्दों में, "कविता के क्षेत्र में निकलकर मेरे गद्य-साहित्य के क्षेत्र को अपनाने का श्रेय मूल रुप से गणेशशंकर विद्यार्थी को है।"[15]

भगवती बाबू की पहली कहानी 1921 में प्रकाशित हुई। 'इन्स्टालमेंट', 'दो बाँके', 'राख और चिनगारी', आदि भगवती बाबू के प्रसिध्द कहानीसंग्रह हैं। 'प्रायःश्चि-त', 'दो बाँके', 'राख और

चिनगारी', 'आवारे", 'दो पहलू', 'उ-तरदायेत्व', 'कायाकल्प', आदि उनकी प्रसिध्द एवं चिरस्थायी कहानियाँ हैं। उनके कहानी-संग्रहों में संकलित कुल कहानियों की संख्या 49 है।

वर्माजी ने अपनी कहानियों में अनेक समस्याओं पर प्रकाश डाला है। जैसे-नारी समस्या, मध्य तथा निम्न वर्गों की समस्याएँ, धर्माडम्बर, अंधश्रध्दा, वर्ग संघर्ष आदि। समस्याओं ने उनकी कहानियों के विचार पक्ष को बोझिल नहीं बना दिया बल्कि बीच-बीच में हास्य और विनोद के मिश्रण ने उनकी कहानियों को और भी अधिक रोचक और मनोरंजक बना दिया है। उनकी अधिकतर कहानियाँ यथार्थ और विचारोत्तेजक हैं।

रोचकता भगवती बाबू की कहानियों का सबसे बड़ा आकर्षण है। उनकी कहानियों का आरम्भ नाटकीय संवादों, लघु वाक्यों दार्शनिक टिप्पणियों या किसी घटना द्वारा हुआ है। कहानियों का अन्त आकर्षक और प्रभावोत्पादक है। "वर्माजी भाग्यवादी तो नहीं हैं परन्तु परिस्थिति को सर्वशक्तिमान स्वीकार कर मानव को उसका दास मात्र मानते हैं। परिस्थिति के भयंकर जाल में जकड़े हुए उनके पात्र इसी कारण सर्वत्र पराजय और विवशता की भावना में ग्रस्त बने रहते हैं और इस संघर्ष में सदैव पराजित होते रहते हैं। उनकी अनेक कहानियाँ इसी कारण दुखान्त हैं।"[16]

वर्माजी ने अपनी कहानियों में पत्र शैली, आत्मकथात्मक शैली, अन्य पुरुष प्रधान शैली, संलाप शैली आदि का प्रयोग किया है। कहानियों की भाषा सीधी, सरल, सुबोध, पात्रानुकूल, भावानुकूल, परिस्थितेनुकूल तथा प्रभावोत्पादक दिखाई देती है। प्रेमचन्द ने जिस प्रकार जमींदार, कृषक, मजदूर, क्लर्क सभी को लेकर लिखा है वैसे वर्माजी नहीं लिख पाये हैं। उनकी कहानियों का क्षेत्र शहरी जीवन तक और शहरी जीवन में भी बहुत कुछ बुध्दिजीवी वर्ग तक ही सीमित है। अतः राजनाथ शर्मा के शब्दों में कहा जा सकता है कि, "उपन्यासों के समान उनकी (वर्माजीकी) कहानियाँ अधिक लोकप्रिय नहीं बन सकीं हैं परन्तु उनकी कहानियों की प्रसिध्दि, उत्कृष्टता, कलात्मकता और लोकप्रियता का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि हिन्दी-कहानी का कोई भी प्रसिध्द संग्रह उनकी कहानी के बिना पूर्ण नहीं माना गया है।"[17]

उपन्यासकार :

भगवती बाबू बहुमुखी प्रतिभा के धनी हैं फिर भी उन्हें एक सफल उपन्यासकार के रुप में ही अधिक जाना जाता है। गणेशशंकर विद्यार्थी से प्रेरणा पाकर ही भगवती बाबू आगे चलकर गद्य

लेखक बने। एक स्थान पर वर्माजी लिखते हैं; "उनसे प्रेरित होकर ही मैंने विक्टर ह्युगो के उपन्यास उस कच्ची उम्र में ही पढ़ डाले थे। क्रान्तियों से सम्बध्द साहित्य के वह विशेषज्ञ थे, विश्व की नवीन उभरती हुई धाराओं को वह स्वाभाविक रुप से आत्मसात कर लेते थे। सन् 1921-22 में ही मैंने उनके प्रभाव से कार्ल मार्क्स, मेक्सीनी एवं फ्रान्स की राज्य क्रान्ति के प्रमुख व्यक्तियों पर लेख लिख ड़ाले थे।" [18]

भगवती बाबू ने घटनाप्रधान, चरित्रप्रधान, समस्याप्रधान, उद्देश्यप्रधान और विचार प्रधान उपन्यास लिखे हैं। उनके उपन्यासों में वस्तु विन्यास की सुचारुता, इतिवृतात्मकता, अन्तर्बाह्य, द्वन्द्व की तीव्रता हमें दिखाई देती है। उनके उपन्यासों की सबसे बड़ी विशेषता है - कथावस्तु की रोचकता। उनके उपन्यासों में हास्य व्यंग्य की झलक भी जहाँ-तहाँ देखने को मिलती है। उनका 'अपने खिलौने' उपन्यास आदयन्त हास्य व्यंग्य से भरपूर है। भगवती बाबू ने अपने उपन्यासों में युगीन सामाजिक तथा राजनीतिक समस्याओं पर प्रकाश ड़ाला है। चित्रलेखा' वर्माजी का सर्व प्रथम समस्याप्रधान उपन्यास है। इसमें तत्कालीन समाज में विद्यमान पाप-पुण्य की समस्या पर प्रकाश डाला गया है। इससे पहले 1928 में उन्होंने अपना प्रथम उपन्यास 'पतन' लिखा जो भगवती बाबू की उपन्यास यात्रा का प्रारंभिक चरण है। चित्रलेखा', 'तीन वर्ष', 'टेढ़े मेढ़े रास्ते', 'आखरी दांव', वर्माजी के विकास पथ के सारथी हैं तो 'अपने अपने खिलौने', 'भूले बिसरे चित्र', वह फिर नहीं आई', 'सामर्थ्य और सीमा', 'थके पांव' आदि उनके उपन्यास यात्रा के प्रौढता के बिन्दु हैं। उनके कुल उपन्यासों की संख्या चौदह है।

भगवती बाबू के सभी उपन्यासों में उन्होंने नारी का कोई न कोई रुप अवश्य उद्घाटित किया है। समाज की उपेक्षित, पीड़ित नारियों को उन्होंने ऊँचा उठाने का प्रयास किया है। उनके अधिकतर उपन्यास सामाजिक समस्याप्रधान रहे हैं। उनके उपन्यासों में सामाजिक आर्थिक, पारिवारिक परिदृश्य यथार्थ पटभूमि पर चित्रित हुआ है। इन समस्याओं के साथ-साथ नारी समस्या, वेश्या समस्या, अछूत समस्या आदि विविध सामाजिक समस्याएँ उनके उपन्यासों में परिलक्षित होती हैं।

निष्कर्ष :

भगवती बाबू के व्यक्तित्व का अध्ययन करने के पश्चात हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि, वर्माजी का व्यक्तित्व अत्यंत साधारण होते हुए भी उसमें प्यार और भावनाओं का सागर अपनी मस्ती में

हिलोरे लेता है। उनमें स्वाभिमान फूट-फूटकर भरा हुआ था। जीवन में उन्हें, अनेक कठिनाइयों का सामन करना पड़ा। जीवन के विशृंखल पारिस्थितियों में भी संघर्ष करते रहना और अपना जीवन सफल बनाना यही उनकी जीवन-दृष्टि है। उनका समस्त जीवन आर्थिक एवं पारिवारिक संघर्ष का जीवन रहा। वर्माजी नियतिवादी कलाकार हैं किन्तु उनका नियतिवाद भ्रान्तिमूलक अंधविश्वास पर आधारित न होकर कर्मवाद पर आधारित है। वर्माजी ने जिस समाज को देखा, भोगा और जाना उसका यथार्थ चित्रण उन्होंने अपने साहित्य में प्रस्तुत किया है। इस प्रकार भगवती बाबू का व्यक्तित्व एक दीपस्तंभ है, जिसके प्रकाश में हिन्दी साहित्य आलोकित हो उठा है।

* कृ ति त्व *

उपन्यासकार के रुप में प्रसिध्द होने से पहले भगवती बाबू कवि और नाटककार के रुप में ख्याति पा चुके थे। किसी भी साहित्यकार को अच्छी तरह से समझने-परखने के लिए उसके सम्पूर्ण कृतित्व का अध्ययन करना अनिवार्य हो जाता है। यहाँ हम भगवती बाबू के कृतित्व का संक्षिप्त लेखा-जोखा दे रहे हैं -

(क) काव्य :

भगवती बाबू ने जिस समय साहित्यिक जीवन प्रारम्भ किया था उस समय किसी भी सृजनशील व्यक्तित्व का कविता से बच निकलना असंभव था। भगवती बाबू भी अधिकांश लेखकों की तरह काव्य के माध्यम से ही साहित्य क्षेत्र में आए। उन्होंने कविता को अपनी एक प्रवृ-त भी महसूस किया है। "कविता एक प्रवृ-त है, तबियत नहीं मानती थी तो जब-तक में लिख लेता था।"[19] वे स्भावतः कवि थे। उनके काव्य में लम्बे समय के उतार चढ़ाव की झलक दिखाई पड़ती है। उनके विचार एवं जीवन-दर्शन की सहज अभिव्यक्ति उनके काव्य में सहज प्राप्त होती है। उनके कुल छः काव्य-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं, जो निम्नांकित हैं -

मधुकण : प्रकाशन काल सन् 1934।

'मधुकण' भगवती बाबू का सर्वप्रथम काव्य-संग्रह है। 'मधुकण' की कविताओं पर स्पष्ट रुप से छायावादी प्रभाव परिलक्षित होता है। प्रेम की पीड़ा, तृष्णाजन्य आकांक्षाएं तथा सृष्टि की अनित्यता कविताओं के प्रमुख विषय हैं। 'मेरी प्यास' और 'आत्मसमर्पण' में रुप के उपभोग की तीव्र लालसा है। 'इन कविताओं में भगवती बाबू का नियतिवादी और व्यक्तिवादी स्वर स्थान-स्थान पर उभरा है।"[20]

इस संग्रह की कविताओं में अवसाद की प्रधानता स्पष्ट दिखाई देती है। कवि सृष्टि की अनित्यता और अदृश्यता के आगे मानवीय सामर्थ्य और उसकी सीमा को भूल नहीं पाता :-

"और मद से इठलाती चाल।
किन्तु है क्षणिक क्षीण आवेश -
प्रबल है प्रबल भयानक काल।"[21]

'मेरी प्यास', 'आत्मसमर्पण' 'क्रय-विक्रय', 'कसक कहानी', 'संसार', 'नूरजहाँ की कब्र पर' आदि इस संकलन की प्रसिद्ध कविताएँ हैं। 'नूरजहाँ की कब्र पर' इस संकलन की सबसे बड़ी कविता है और इसे इस संकलन की सफल रचना कही जा सकती है। 'तारा' इस संकलन का गीति-एकांकी है, जिसमें तारा और चन्द्रमा के माध्यम से कवि पाप-पुण्य, प्रेम और तृष्णा के सम्बन्ध में विचार प्रकट करता है।

प्रेम संगीत :

सन् 1936 में प्रकाशित यह भगवती बाबू का द्वितीय कविता संग्रह है। इसमें संकलित सभी रचनाएँ श्रृंगार रस से ओत-प्रोत हैं। इस काव्य का प्रमुख स्वर है - प्रेम के भौतिक पक्ष के प्रति आसक्ति और उसे भोगना। कुछ स्थलों पर बच्चन के कविताओं का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है -

"यौवन की इस मधुशाला में
है प्यालों का ही स्थान प्रिये
फिर किसका भय? उन्मत्त बनो
है प्यास यहां वरदान प्रिये।"[22]

उनकी प्रसिद्ध रचना 'हम दिवानों की क्या हस्ती' इसी संकलन में है। भगवती बाबू का फक्कड़पन और उनकी मस्ती स्थान-स्थान पर झलकती दिखाई देती है -

'हम दीवानों की क्या हस्ती,
हैं आज यहाँ, कल चले जहाँ,
मस्ती का आलम साथ चला;
हम उड़ाते चले धूल जहाँ" (हम दीवानों की क्या हस्ती कविता से)

एक दिन : इसका प्रकाशन सन् 1939 में हुआ।

'एक दिन' भगवती बाबू की मुक्त छंद की कविताओं और विचार-प्रधान ललित-गद्य का संकलन है। भगवती बाबू आधुनिक कविताओं के प्रति विशेष सम्मान नहीं रखते और मुक्त छंद के प्रति तो बिलकुल ही नहीं। वस्तुतः इस संकलन की कविताएँ जैसे चैलेंज स्वीकार करके एक ही दिन में

लिखी गई हैं। इस संकलन की अधिकांश कविताएँ बदलते हुए सामाजिक परिवेश को उद्घाटित करती हैं। कविताओं के शिल्प पर 'निराला' का प्रभाव दिखाई देता है। इस में हास्य-व्यंग्य का स्वर प्रमुख है।

मानव :

इस काव्य संग्रह का प्रकाशन सन् 1940 में हुआ। मानव जीवन की धड़कने और मानव समाज पर कवि के मन की प्रतिक्रियाएँ इसमें उभरी हैं। इसमें कवि छायावाद के लीक से हटकर प्रगतिवादी धारा में बहता हुआ दिखाई देता है। किन्तु 'कवि का स्वप्न', 'एक रात' आदि कविताओं पर छायावाद की पकड़ दिखाई देती है। 'जीवन दर्शन', विषमता', 'भैंसागाडी', 'ट्राम', विस्मृति के फूल', 'राजासाहब का वायुयान' आदि इस संग्रह की प्रगतिवादी कविताएँ हैं।

'जीवन दर्शन' में कवि समाज में व्याप्त विषमता पर अपनी दृष्टि केन्द्रित करता हुआ दिखाई देता है। विस्मृति के फूल' इस संकलन की सबसे लम्बी रचना है जिसका शिल्प छायावादी होते हुए भी कथ्य में प्रगतिवादी तत्व विद्यमान है। संक्षेप में इस संकलन में कवि कल्पना के क्षेत्र से हटकर ठोस एवं कुरुप, यथार्थ धरातल पर स्थापित होने की चेष्टा करता हुआ दिखाई देता है।

त्रिपथगा : इसका प्रकाशन काल सन् 1956 है।

इसमें पौराणिक आख्यानों पर आधारित 'महाकाल', 'कर्ण' और 'द्रौपदी' ये तीन रेडियो रुपक संकलित हैं। 'महाकाल' सृष्टि में मानव की स्थिति पर विचार करने वाला प्रतीकात्मक रुपक है, तो शेष दो महाभारत की कथाओं पर आधारित हैं। इन रुपकों में सांस्कृतिक पहलू अवश्य विद्यमान हैं किन्तु घटनाओं के चित्रण में वैज्ञानिक दृष्टिकोण कवि ने अपनाया है।

'कर्ण' में कवि ने कर्ण के मनोविज्ञान को प्रमुखता दी है तो 'महाकाल' में कवि मानव की सीमाओं और कार्यों पर प्रकाश डालता है। 'द्रौपदी' में कवि द्रौपदी की विडंबनापूर्ण स्थिति का विश्लेषण करता है। सम्पूर्ण रुपक में कवि ने पात्रों की मानसिक उद्भावनाओं की बडे सफल ढंग से अभिव्यक्ति की है।

रंगो से मोह : इस काव्य संग्रह का प्रकाशन सन् 1968 में हुआ।

इसमें वर्माजी की अपेक्षाकृत प्रौढ रचनाएँ संकलित हैं। इसमें उनकी नियतिवादी चिंतनधारा स्पष्ट दिखाई देती है। अधिकांश रचनाओं में कवि मानव की विवशता और नियति की निरंकुशता को स्वीकारता हुआ दिखाई देता है -

"पर फिर भी मैं हूं विजित विवश, -----
वह शक्ति जो कि मेरे ऊपर?"[23]

'उलटी सीधी', 'नजर तुम्हारी जाली है', 'देखो-सोचो-समझो', 'मान-मनौता', 'वर्माजी ने खाए आम', 'वर्माजी ने मारी लात' आदि इस संकलन की व्यंग्यात्मक साथ ही मनोरंजक कविताएँ हैं। 'रंगों से मोह' इस संकलन की सर्वश्रेष्ठ कविता है। इस कविता में जीवन की सहजता और सौंदर्य के प्रति कवि की अनुरक्ति झलकती है। इन रचनाओं में कुरुप यथार्थता के स्वर स्थान-स्थान पर परिलक्षित होते हैं किन्तु सभी में कवि की मस्ती का स्वर प्रमुख हो उठा है।

(ख) कहानी :

भगवती बाबू ने अपनी कहानियों के द्वारा हिन्दी कहानी को शक्ति और गति प्रदान की। वर्माजी में कहानी गढ़ने की बेहद क्षमता थी। हालांकि उन्होंने कहानियाँ अधिक मात्रा में नहीं लिखी हैं किन्तु उनकी कहानियों में विविधता के दर्शन अवश्य होते हैं। अपनी कहानियों में उन्होंने हास्य और व्यंग्य को प्रमुखता दी है। उनके कहानियों की सबसे बड़ी विशेषता है- रोचकता। उनकी कहानियां पूर्णतः सामाजिक पृष्ठभूमि पर लिखी गई हैं। श्री रमाकान्त श्रीवास्त के शब्दों में, "उनकी हर कहानी 'रोचक' है। यह माना जा सकता है कि उनकी हर कहानी गहरी नहीं है किन्तु उनकी हर कहानी मन को बांधने में सक्षम है।"[24] उनकी अधिकतर कहानियाँ चरित्रप्रधान हैं साथ ही बौध्दिक विचारों और समस्याओं को लेकर लिखी गई हैं।

इंस्टालमेंट : प्रकाशन काल सन् 1937।

'इंस्टालमेंट' भगवती बाबू का पहला कहानी संग्रह है। इनकी कहानियों को पढ़ने से ऐसा लगता है कि, कहानी कहना ही लेखक का उद्देश्य है। उनके अधिकतर कहानियों में किसी होटल या मित्रमंडली में कोई व्यक्ति कहानी कहना प्रारम्भ कर देता है। 'मुगलोंने सल्तनत बख्श दी' कहानी इसका अच्छा उदाहरण है। इस कहानी में हीरोज़ी आरम्भ से अन्त तक कहानी सुनाता रहता है। 'प्रेजेण्टस्', 'वर्ना हम भी आदमी थे काम के', 'कुंवर साहब मर गए', 'एक अनुभव', 'एक विचित्र चक्कर है', 'परिचयहीन यात्री', 'इंस्टालमेंट' आदि कहानियां घटनाप्रधान हैं। अधिकतर कहानियों में लेखक ने पैनी दृष्टि से व्यंग्य बान कसा है जो जीवन की विसंगतियों पर प्रकाश डालती है।

'विक्टोरिया क्रास', 'मुगलों ने सल्तनत बख्श दी', 'प्रायश्चित' आदि इस संग्रह की प्रसिध्द कहानियां हैं। 'अर्थ-पिशाच', 'बेकारी का अभिशाप', 'बाय! एक पेग और' कहानियां आधुनिक सभ्यता की अर्थ-लिप्सा का चित्रण करती हैं।

दो बाँके : इसका प्रकाशन सन् 1938 में हुआ।

इस संकलन की अधिकतर कहानियों में कथानक सरल, एकोन्मुख और यथार्थ हैं। 'इस संकलन की छोटी-छोटी कहानियां, जो जीवन-मूल्यों के प्रश्नों को बड़े तीखे रुप में सामने रखती हैं, वास्तव में हिन्दी कथा-साहित्य की निधियां हैं।" 'दो पहलू' कहानी में लेखक मानव-जीवन के दो चित्रों को प्रस्तुत करके जीवन की सार्थकता का तीखा प्रश्न उठाता है। उसी तरह 'काश, कि मैं कह सकता', किसने शरीर बेचा- किसने आत्मा बेची-और क्यों?' 'विवशता' और 'नाजिर मुंशी' आदि सशक्त रचनाएं हैं। तिजारत का नया तरीका', 'अनशन', 'लाला तिकडमी लाल' आदि उनकी मनोरंजनकारी कहानियां हैं। कुछ कहानियों में व्यंग्य और रंजन दोनों तत्व विद्यमान हैं जिसके कारण वे अत्यन्त सशक्त रचनाएं बन गई हैं। जैसे- 'कुंवर साहब का कु-ता', और 'दो बांके। 'दो बांके' कहानी कथ्य और शैली की ताजगी के कारण हिन्दी की अत्यन्त सफल और प्रसिध्द कहानियों में से एक है।

राख और चिनगारी :

'राख और चिनगारी' कहानी-संग्रह पूंजीवादी युग में सिसकती हुई मानवीय मजबूरियों को प्रस्तुत करता है। इस संकलन में 'राख और चिनगारी', 'वह फिर नहीं आई', 'आवारे' और खिलावन का नरक आदि सशक्त रचनाएं हैं। 'वह फिर नहीं आई' कहानी के प्लाट पर वर्माजी ने बाद में एक लघु उपन्यास भी लिखा है किन्तु कहानी उपन्यास से अधिक सशक्त है। इस संकलन की सर्वश्रेष्ठ कहानी 'आवारे' है। कहानी में कुछ बेकार नवयुवक परिस्थितियों से जूझते हुए एक साथ रहते हैं। वे सभी बेकार हैं लेकिन स्वाभिमानी हैं। अपने से अधिक कडुवे दुसरों के अनुभव ही उन सभी के लिए मरहम का काम करते हैं। पूरी कहानी हास्य शैली में लिखी गई है और कहानी का अन्त अत्यंत प्रभावशाली ढ़ंग से किया गया है।

(ग) नाटक :

वर्माजी ने नाटक अधिक नहीं लिखे किन्तु जो कुछ भी लिखे उससे उन्हें एक सफल नाटककार कहा जा सकता है। उन्होंने दो पूर्ण नाटक और कुछ एकांकी लिखे हैं। नाटकों की अपेक्षा उनके एकांकी अधिक सफल कहे जा सकते हैं। अपने नाटकों एवं एकांकी को मंचेय बनाने में उन्हें सफलता मिली है।

बुझता दीपक : प्रकाशन तिथि : 1947।

इसमें भगवती बाबू के तीन एकांकी और एक नाटक संग्रहीत हैं। 'दो कलाकार' और 'सबसे

बड़ा आदमी 'हास्य-प्रधान एकांकी हैं । इसमें संकलित 'चौपाल' व्यंग्य प्रधान एकांकी है । तीनों एकांकी अभिनेयता की कसौटी पर खरे उतरते हैं ।

'दो कलाकार ' में एक लेखक और चित्रकार की फटीचर हालत दिखाई गई है । 'सबसे बड़ा आदमी' में लोगों को बेवकूफ बनाकर जेबें साफ करनेवाले व्यक्ति को सबसे बड़ा आदमी घोषित किया है । यह उनके अन्य एकांकी से उपेक्षाकृत प्रसिध्दि-प्राप्त एकांकी है । 'चौपाल' में ग्रामीण समाज के बड़े लोगों की मनोवृत्ति दिखलाई गई है । 'बुझता दीपक' पूर्ण नाटक है । राजनैतिक और सामाजिक जीवन में चरित्र का जो संकट विद्यमान है उसी संकट को नाटक की विषयवस्तु बनाया गया है । हर क्षेत्र में फैले निहित-स्वार्थो और भ्रष्टाचार का दबाव किस प्रकार ईमानदार आदमी पर चारों ओर से पड़ता है इसका अत्यंत मार्मिक चित्रण लेखक ने किया है ।

रुपया तुम्हें खा गया : प्रकाशन तिथि : 1955 ।

यह भगवती बाबू का दूसरा नाटक है । इस नाटक में लेखक आधुनिक समाज की अर्थ-लिप्सा पर कठोर प्रहार करता है । यह नाटक तीन अंकों में विभाजित है । आज का मनुष्य किस प्रकार रुपये कमाने के पीछे पागल है और समस्त मानवीय गुणों को भूलकर किस प्रकार अर्थ-पिशाच बन गया है, इसका जिता-जागता चित्र इस नाटक में देखा जा सकता है ।

(घ) निबंध :

वर्माजीने हिन्दी-निबंध-साहित्य में भी अपना योगदान दिया है । उन्होंने साहित्यिक और सामाजिक निबंध लिखे । साहित्यिक निबंधों में उन्होंने विभिन्न साहित्य की विधाओं पर अपने मत प्रकट किये हैं, तो सामाजिक निबंधों में विभिन्न सामाजिक समस्याओं पर प्रकाश ड़ाला है ।

साहित्य की मान्यताएं : प्रकाशन तिथि : 1962 ।

प्रस्तुत संकलन के निबंधों के माध्यम से लेखक ने साहित्य के विभिन्न क्षेत्रों एवं विभिन्न साहित्यिक विधाओं पर अपने विचार व्यक्त किए हैं । इसमे से पहले सात निबंध चिंतन प्रधान हैं । ये निबंध भगवती बाबू के साहित्य को समझने, परखने के लिए एवं उसका मूल्यांकन करने के लिए अत्यंत सहायक सिध्द होते हैं । इस संकलन के शेष निबंध विश्लेषणात्मक हैं जिनमें साहित्य की विधाओं पर चर्चा है । लेखक ने उपन्यास, कहानी, कविता, रेखाचित्र, निबंध, शब्दचित्र, नाटक आदि पर अपने विचार रखे हैं, साथ ही कविता पर तीन निबंध लिखे हैं - 1) परम्परागत कविता : छायावाद 2) प्रगतिवाद : उपयोगिता अथवा प्रचार 3) प्रयोगवाद अथवा नई कविता ।

'भावना, बुध्दे और कर्म', 'साहित्य का स्त्रोत', 'साहित्य में शब्द का स्थान' आदि इस संकलन के प्रारंभिक निबंधों की अपेक्षा उ-तरार्ध के निबंध आपेक्षाकृत अधिक उलझनपूर्ण हैं।

हमारी उलझन : प्रकाशन, सन् 1951 ।

इस संकलन के निबंध विश्लेषणात्मक न होकर विवेचनात्मक हैं। लेखक ने इसमें सामाजिक समस्याओं, प्रचलित मान्यताओं पर अपने विचार अभिव्यक्त किए हैं। इसमें लेखक की आधुनिक और क्रान्तिकारी विचारधारा का परिचय मिलता है। 'ईश्वर' 'परिग्रहण और दान', 'श्रेणी भेद' आदि निबंधों में प्रचलित विचार धारा और परम्पराओं के प्रति उनकी असहमति स्पष्ट दिखाई देती है। विचारविनिमय', 'अहम् का विकास', दिवाली', 'होली', 'हरखू की बारात' आदि इस संकलन के उल्लेखनीय सामाजितक निबंध हैं।

(च) कथायात्रा :

भगवती बाबू की कथायात्रा हिन्दी साहित्य की एक बहुत बड़ी उपलब्धी है। वर्माजीने कुल 14 उपन्यास लिखे। मुंशी प्रेमचन्द ने 'गोदान' उपन्यास लिखकर अपने आदर्शवाद को धक्का दिया और यथार्थवादी बन गये। यह हिन्दी उपन्यास साहित्य की प्रारंभिक अवस्था थी जिसका अभूतपूर्व विकास भगवती बाबू ने किया। उनका कथासाहित्य इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है।

प्रारंभिक चरण :

पतन : 1928 में प्रकाशित 'पतन' भगवती बाबू का प्रथम उपन्यास है। इसमें लेखक एक युग विशेष का पतन दिखलाना चाहता है किन्तु 'पतन' गंभीर और गहरी रचना नहीं बन सकी है। इसकी कथा एक साधारण-सी जासूसी अथवा घटनाप्रधान कहानी होकर रह गई है। कथानक में कल्पना का ही भरपूर सहारा लिया गया है और वह केवल संयोगों के सहारे ही आगे बढ़ती है। फिर भी 'पतन' का कथानक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि लिए हुए है।

विकास - पथ :

चित्रलेखा : चित्रलेखा' उपन्यास सन् 1933 में प्रकाशित हुआ। चित्रलेखा' भगवती बाबू का दूसरा और सफल उपन्यास है। इसकी भाषा काव्यमय और शैली तर्कप्रधान है। इसका प्रत्येक पात्र बुध्दिजीवी होने के कारण प्रत्येक बात नाप-तोलकर, अकाट्य तर्कों के माध्यम से कहता है। उपन्यास में लेखक ने पाप-पुण्य की शाश्वत समस्या को उठाया है और नये जीवन मूल्यों को स्थापित करने का प्रयास किया है। इसमें यही स्पष्ट किया गया है कि, "मनुष्य न पाप करता है न पुण्य, वह परिस्थितिवश अपना आचरण करता है।" इस उपन्यास में लेखक का नियतिवादी दृष्टिकोण स्पष्ट

झलकता हुआ दिखाई देता है। पाप और पुण्य जैसे दार्शनिक एवं जटिल विषय पर लिखा गया इतना दिलचस्प उपन्यास हिन्दी में दूसरा नहीं है। उपन्यास के अन्त में स्थापित निष्कर्ष से हम भले ही सहमत न हों किन्तु इस रचना ने उन्हें श्रेष्ठ उपन्यासकार के रुप में स्थान दिला दिया है।

तीन वर्ष : 'तीन वर्ष' सन् 1936 में प्रकाशित हुआ है। यह उपन्यास भी तर्कप्रधान है। इसका कथानक यथार्थ भूमि पर निर्मित है। 'चित्रलेखा' की तरह इसकी विषयवस्तु सीमित है। आधुनिक समाज व्यवस्था में मनुष्य किस प्रकार अर्थ-पिपासु बन गया है, इसका चित्रण इस उपन्यास में किया गया है। आज स्त्री-पुरुष सम्बन्ध भावना पर आधारित न होकर आर्थिक सुविधाओं पर आधारित हैं। प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने समाज में प्रतिष्ठित नारियों की तुलना में वेश्याओं को श्रेष्ठ घोषित किया हैं।

टेढ़े मेढे रास्ते : इसका प्रकाशन काल सन् 1946 है। वर्माजी का यह विशुध्द राजनीतिक उपन्यास है। डा.रमाकान्त श्रीवास्तव के शब्दों में, 'हिन्दी में ऐसा कोई दूसरा उपन्यास नहीं है जिसमें विभिन्न राजनैतिक वादों, विचारधाराओं तथा राष्ट्रीय हलचल को ही विशुध्द कथ्य का स्थान प्राप्त हो सका है।"[26] इस उपन्यास में लेखक एक परिवार के कुछ सदस्यों के माध्यम से सन् 1930 के आस पास के भारतीय परिवेश को समेटने का प्रयास करता है।

आखिरी दांव : भगवती बाबू का यह उपन्यास बम्बई के फिल्मी-जीवन के अनुभवों पर आधारित है। । इसका प्रकाशन 1950 में हुआ। वस्तु विन्यास की सुचारुता, इतिवृ-त की रोचकता तथा अन्तर्बाह्य द्वन्द्व की तीव्रता को इसमें महत्वपूर्ण माना गया है। उपन्यास में पूंजीवादी युग में पनपती अर्थ-पिपासा पर काफी चर्चा है, साथ ही स्त्री-पुरुष संबंध की नैतिकता की समस्या को प्रधानता दी गई है। उपन्यास के जरिये लेखक यही बताना चाहता है कि मनुष्य का जीवन जुए के एक दांव के समान अनिश्चित है। "आखिरी दांव' सामाजिक समस्याओं का आभास मात्र देता है किन्तु वह नियतिवादी जीवन-दर्शन को व्यक्त करने वाली एक सामान्य कहानी है जो सिध्द करती है कि मनुष्य का जीवन एक जुए की तरह है - पूर्ण अस्थिर और किसी हद तक दूसरे के हाथ में।"[27]

प्रौढता के बिन्दु पर :

अपने खिलौने : 'अपने खिलौने' सन् 1957 में प्रकाशित हुआ। उपन्यास आदयोपान्त हास्य-व्यंग्य से भरा पड़ा है। हिन्दी उपन्यास साहित्य में विशुध्द हास्य व्यंग्य का प्रारंभ से ही अभाव रहा, इस अभाव की पूर्ति है - 'अपने खिलौने'। अनेक अन्य उपन्यासों की तरह इस उपन्यास में न तो कोई

बड़ा उद्देश्य है और न बड़ी-बड़ी बातें। इसका कथानक सुगठित और संतुलित है। हिन्दी उपन्यास साहित्य में 'अपने खिलौने' अपना विशेष्ट स्थान रखता है।

भूले बिसरे चित्र : यह भगवती बाबू की अत्यंत प्रौढ और सर्वश्रेष्ठ रचना मानी जाती है। यह कृति सन् 1959 में प्रकाशित हुई। इसमें महाकाव्य के सभी स्वर विद्यमान हैं। 'भूले बिसरे चित्र' को 'टेढ़े मेढे रास्ते' की पहली कड़ी माना जाता है। इसमें एक ही परिवार के चार पीढ़ियों की कथा बदलते परिप्रेक्ष्य के साथ रखी गई है। युगान्तर के फलस्वरुप नैतिक मानदण्ड और व्यक्ति के पारस्परिक सम्बंधों में जो भी अन्तर आया है उसका सम्पूर्ण और यथार्थ अंकन इस उपन्यास में हुआ है। 'भूले बिसरे चित्र' भगवती बाबू की साहित्य-यात्रा का मील का पत्थर है।"[28] प्रस्तुत उपन्यास की चर्चा अगले अध्यायों में विस्तार के साथ की गई है।

वह फिर नहीं आई : सन् 1960 मे प्रकाशित 'वह फिर नहीं आई' भगवती बाबू का लघु उपन्यास है। इसी नाम की एक लम्बी कहानी उन्होंने लिखी है जो 'राख और चिनगारी' में संकलित है। कहानी और उपन्यास में केवल कलेवर का अन्तर है। इसकी शैली आत्मकथात्मक है और यह उपन्यास एक सामान्य घटनाप्रधान है।

सामर्थ्य और सीमा : सन् 1962 में प्रकाशित भगवती बाबू का उपन्यास 'सामर्थ्य और सीमा' 'भूले बिसरे चित्र' की तरह सही अर्थो में एक प्रौढ़ कृति है। औपन्यासिक तत्वों का सही संतुलन इस कृति में देखा जा सकता है। इस उपन्यास में लेखक मनुष्य की सामर्थ्य और उसकी सीमा का मूल्यांकन करता है। वजनदार कथ्य, सबल और सरस प्रस्तुतीकरण आदि के कारण उपन्यास स्वाभाविक एवं सरल बन पाया है। इसी कारण 'सामर्थ्य और सीमा' एक प्रौढ़ कृति है।

थके पांव : 'थके पांव' सन् 1963 में प्रकाशित भगवती बाबू का लघु उपन्यास है। लेखक ने विवशतावश 'थके पांव' नाम का रेडियो प्ले लिखा था जिसे दूसरी बार विवश होकर उपन्यास का रुप दे दिया। शहरी जीवन की घुटन को भोगते हुए निम्न - मध्य वर्ग के आर्थिक संघर्ष को चित्रित करना उपन्यास का मुख्य उद्देश्य है। आर्थिक कठिनाइयों में जकड़े हुए आज के आम आदमी का यह केवल 'किस्सा' है।

अद्यतन रचनाएं -

रेखा : सन् 1964 में प्रकाशित उपन्यास 'रेखा' यौन-कुंठाओं से ग्रस्त रोमानी आदर्श और कटु यथार्थ के बीच भटकती हुई विवाहित स्त्री की कहानी है। भगवती बाबू की यह मनोवैज्ञानिक कृति कही जा सकती है।

सीधी - सच्ची बातें : सन् 1968 में प्रकाशित उपन्यास 'सीधी-सच्ची बातें' भगवती बाबू का एक और बृहत उपन्यास है। यह उपन्यास 'भूले बिसरे चित्र' की अगली कड़ी के रुप में लिखा गया है। इसकी पृष्ठभूमि सन् 1938 से 1948 तक का काल है जिसमें त्रिपुरी कांग्रेस से लेकर बापूजी की मृत्यु तक की घटनाएं हैं।

सुनहें नचावत राम गुसाईं : यह उपन्यास सन् 1970 में प्रकाशित हुआ। कथ्य और शिल्प की दृष्टि से वर्माजी की परवर्ती कृतियों में यह कृति सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। विश्वयुध्द के समय जो काला बाजारी और रिश्वतखोरी प्रारम्भ हुई थी वह बढ़ते-बढ़ते किस तरह स्वतन्त्र भारत में व्यापक रुप धारण करती हैं, इसका सजीव चित्रण इस उपन्यास में स्वाभाविक ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

प्रश्न और मरीचिका : सन् 1973 में प्रकाशित 'प्रश्न और मरीचिका' भगवती बाबू का नवीनतम् बृहत् उपन्यास है। चार खण्डों में विभाजित यह उपन्यास भारतीय समाज की उथल-पुथल पर आधारित है। उपन्यास की पटभूमि 15 अगस्त, 1947 से लेकर 1963 तक फैली हुई है। स्वातंत्र्यो-तर भारत के जीवन-मूल्यों के विघटन की कहानी सीधे और सहज ढंग से इस कृति के माध्यम से सामने आती है।

अतः निर्विवाद रुप से यह कहा जा सकता है कि भगवती बाबू की उपन्यास यात्रा प्रदीर्घ है। वह एक सफल उपन्यासकार हैं। उनके उपन्यास उनकी सफल यात्रा के स्वयं प्रमाण हैं। उपन्यासकार के रुप में उन्होंने हिन्दी साहित्य में अपना अलग स्थान निर्धारित किया है। भगवती बाबू के उपन्यास हिन्दी उपन्यास साहित्य में एक नया मोड़ है। हिन्दी उपन्यास साहित्य में उनका नाम एक सफल उपन्यासकार के रुप में स्वर्णाक्षरों में लिखा जाने योग्य है।

भगवती बाबू ने कविता कहानी, नाटक, उपन्यास और निबंधों के अतिरिक्त संस्मरण, चित्रालेख, साहित्य-सिध्दान्त तथा रुप-साहित्यालोचन आदि अन्य विधाओं में भी लिखा है।

'अतीत के गर्त से' भगवती बाबू का संस्मरण है। इसमें लेखक ने अपने लेखन यात्रा के साथी एवं विभिन्न पत्रकारिता से सम्बध्द शीर्षस्थ व्यक्तियों के प्रति अपनी भावनात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त की है। इसमें संकलित सभी व्यक्तियों से उनका हार्द-सम्बन्ध रहा, आज वे सभी अतीत के हो चुके हैं। 'वासवद-ता' नामक चित्रालेख भगवती बाबू ने मूल रुप से फिल्म के लिए लिखा था इसलिए उसमें फिल्मी नाटक के तत्व विद्यमान हैं। इसे हम हिन्दी में प्रकाशित प्रथम चित्रालेख स्वीकार कर सकते हैं। 'गद्य साहित्य' में उनकी साहित्यालोचना का परिचय मिलता है। 'मेरी प्रिय कहानियाँ' में वर्माजी ने अपनी प्रिय कहानियों को संकलित किया है।

इस प्रकार भगवती बाबू का सृजनात्मक साहित्य विविधताओं से भरपूर है। क्या नहीं है उनके साहित्य में? कविता, कहानी, एकांकी, नाटक, उपन्यास, निबंध, संस्मरण सब कुछ तो है। उनके साहित्य में तजुर्बों से सिंचित एक स्वस्थ जीवन-दर्शन है। अतः राजनाथ शर्मा वर्माजी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर अपने पुस्तक में लिखते है - 'वर्माजी-हिन्दी साहित्य की उन शक्तियों में से हैं जिनके व्यक्तित्व और साहित्य में बिजली की तेजी है, जिनकी भाषा जल-प्रवाह की तरह या गायन की स्वर-लहरी की तरह मानव मन को स्पान्दित करती है, एक उद्वेलन पैदा करती है। उनके साहित्य में लेखक के जीवन, पारिस्थितियों की भयानक कुरुपता, उनकी विषमता और इन सब के प्रति कला के आक्रोश का आव्हान सुनाई पड़ता है।[29]

निष्कर्ष :

निष्कर्ष रुप में हम कह सकते हैं कि भगवती बाबू का साहित्य एक कल्पवृक्ष की भाँति विविध गुण सम्पन्न है जो श्रोताओं में अमृत रस बाँटना चाहता है। उनका साहित्य विविध मुखी है। कविता से लेकर कहानी, निबंध, नाटक, एकांकी, उपन्यास, संस्मरण आदि लगभग सभी विधाओं में अपनी बहुमुखी प्रतिभा का परिचय दे दिया है। उनके साहित्य में व्यक्तिवादी एवं निराशावादी स्वर प्रधान है फिर भी वे यथार्थवादी कलाकार हैं। उनका व्यक्तिवाद व्यक्ति के सीमित परिवेश से निकलकर सामाजिक बन गया है। वर्माजी मध्यवर्गीय समाज से जुडे रहे इसलिए उनके साहित्य में मध्यवर्ग का ही अधिक चित्रण हुआ है, फिर भी उनके साहित्य में मानव जीवन की गहरी झाँकी प्रस्तुत हुई है।

समग्रतः भगवती बाबू की साहित्यिक उपलब्धि एक हरे-भरे बगीचे के समान है, जिसमें रंग-बिरंगे फूल खिले हैं। कुछ फूल गंधों से तो कुछ रंगों से श्रोताओं को आकर्षित करते हैं। कुछ फूल ऐसे भी हैं जो गोधित होकर भी देखने वाले को विचार करने पर मजबूर करते हैं। उनके दिलों को झकझोर देते हैं। अतः वर्माजी का कृतित्व उनके व्यक्तित्व और जीवन-दर्शन का निचोड़ है।

* संदर्भ संकेत सूची *

1. श्रीवास्तव रमाकान्त डा., व्यक्तेवादी एवं नियतेवादी चेतना के संदर्भ में उपन्यासकार भगवतीचरण वर्मा, पृ.318
2. वर्मा भगवतीचरण, अतीत के गर्त से, पृ.11
3. श्रीवास्तव रमाकान्त डा., व्यक्तेवादी एवं नियतेवादी चेतना के संदर्भ में उपन्यासकार भगवतीचरण वर्मा, पृ.319
4. शुक्ल बैजनाथ प्रसाद डा., भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों में युग चेतना, पृ.33
5. वर्मा भगवतीचरण, अतीत के गर्त से, पृ.46
6. - वही - पृ.9
7. वार्ष्णेय कुसुम डा., भगवतीचरण वर्मा, पृ.3
8. वर्मा भगवतीचरण, अतीत के गर्त से, पृ.42
9. भारती धर्मवीर सं., अर्पित मेरी भावना, पृ.10
10. शुक्ल बैजनाथ प्रसाद डा., भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों में युगचेतना, पृ.27
11. भारती धर्मवीर सं., अर्पित मेरी भावना, पृ.32
12. शुक्ल बैजनाथ प्रसाद डा., भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों में युगचेतना, पृ.27
13. शर्मा राजनाथ, हिन्दी के प्रमुख कहानीकार, पृ.55
14. वर्मा भवगतीचरण, अतीत के गर्त से, पृ.64
15. - वही - पृ.13
16. शर्मा राजनाथ, हिन्दी के प्रमुख कहानीकार, पृ.57-58
17. - वही - पृ.56
18. वर्मा भगवतीचरण, अतीत के गर्त से, पृ.12-13
19. वर्मा भगवतीचरण, रंगों से मोह (प्रस्तावना से)
20. श्रीवास्तव रमाकान्त डा., व्यक्तेवादी एवं नियतेवादी चेतना के संदर्भ में उपन्यासकार भगवतीचरण वर्मा, पृ.86
21. वर्मा भगवतीचरण, मेरी कविताएँ, पृ.152
22. - वही - पृ.85
23. - वही - पृ.25

24. श्रीवास्तव रमाकान्त डा., व्यक्तिवादी एवं नियतिवादी चेतना के संदर्भ में उपन्यासकार भगवतीचरण वर्मा, पृ.7।

25. - वही - पृ.93

26. - वही - पृ.118

27. - वही - पृ.123

28. - वही - पृ.129

29. शर्मा राजनाथ, हिन्दी के प्रमुख कहानीकार, पृ.57

× × ×